संक्रामक रोग

हमारे देश में संक्रामक रोगों के कारण प्रत्येक वर्ष बड़ी संख्या में पशुओं की मृत्यु हो जाती है तथा जो इन बीमारी से बच जाते हैं, उनकी उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। प्रमुख संक्रामक बीमारियों के उपचार की अपेक्षा टीकाकरण सबसे सस्ता एवं कारगर उपाय है।

बीमार पशुओं की सामान्य पहचान

- पशु की गति, चाल, व्यवहार तथा हाव भाव में परिर्वतन आना।
- चारा न खाना, जुगाली न करना तथा अन्य पशुओं से अलग रहना।
- दुग्ध उत्पादन में गिरावट आना।
- कान तथा गर्दन नीचे करके खड़े रहना।
- सुस्त रहना, बाल खड़े, त्वचा का सूखापन तथा लचीला न होना।
- शारीरिक तापक्रम, नाड़ी गति एवं श्वास गति में परिर्वतन होना।
- आँख, नाँक, व मुँह से द्रव्यों का बहना।
- अधिक पतला अथवा कड़ा गोबर होना।
- आँखों से कीचड़ आना।
- मद चक्र समय पर न आना।
- शुष्क थूथना।
- लंगड़ा कर चलना।
- वजन गिरना अथवा वृद्धि रूक जाना।

पशुओं के प्रमुख संक्रामक रोग

गला घोंटू (एच.एस.) : यह रोग पशुओं को बरसात में अधिक होता है इस बीमारी में पशु को तेज बुखार होता है और वह खाना–पीना छोड़ देता है।

धीरे–धीरे गले में सूजन हो जाती है। सूजन के कारण साँस लेने में परेशानी होने लगती है। जिसके कारण पशु मुहँ खोलकर साँस लेते हैं और घर्र–घर्र की आवाज होती है। बचाव के लिए 3 माह के ऊपर के सभी पशुओं को वर्ष में एक बार टीकाकरण कराया जाना चाहिए। उपचार हेतु पशु–चिकित्सक से सलाह लें।

खुरपका–मुँहपका रोग (एफ.एम.डी.) : यह बीमारी गाय, भैंस में बड़ी शीघ्रता से फैलती है तथा एक प्रकार के विषाणु से उत्पन्न होती है। यह रोग गाय, भैंसों के अतिरिक्त भेड़, बकरियों व सूकरों में भी होती है। इस बीमारी में जीभ के नीचे मसूड़ों, थनों तथा खुरों में छोटे आकार के छाले/फफोले पड़ जाते हैं। पशुओं को तेज बुखार होता है व जुगाली करना बन्द कर देते हैं। दूध उत्पादन भी कम हो जाता है। पशुओं के मुँह से लार गिरने लगता है। थनों पर छालों से कभी–कभी थनैला की बीमारी भी हो सकती है। बछड़ों में यह बीमारी घातक रूप ले लेती है जिससे मृत्यु हो जाती है। गाभिन पशुओं में गर्भपात भी हो सकता हैं।

लंगड़ी (ब्लैक क्वार्टर) : यह रोग गाय एवं भैंसो में जीवाणु से होता है। यह बीमारी भी बरसात के समय अधिक होती है विशेष रूप से छोटी उम्र के पशुओं में। कभी–कभी अगले पैरों की मांसपेशियाँ सूज जाती हैं तथा काले रंग की हो जाती हैं जिसे दबाने पर किड़किड़ की आवाज आती है। पशु चलने में काफी परेशानी महसूस करता है। पशु को तेज बुखार हो जाता है ऐसे पशुओं का गोबर सफेद झिल्ली से ढका रहता है। उचित समय पर इलाज न मिलने पर पशु अत्यधिक कष्ट का अनुभव करता है तथा पशु की मृत्यु भी हो सकती है।

प्लीहा/ तिल्ली या बागी रोग (एन्थ्रैक्स) : यह रोग जीवाणु से होता है तथा अति तीव्रता से बढ़ने वाला यह छूत का रोग है। यह रोग पालतू जानवरों जैसे गाय, भैंस, भेंड़, बकरी, घोड़ा आदि के अतिरिक्त इन पशुओं के संसर्ग में रहने वाले मनुष्यों को भी हो जाता है। इसका जीवाणु (बैसिलस एन्थ्रेसिस) वर्ष पर्यन्त मिट्टी, गोबर, चमड़े व हड्डियों में जीवित रहता है। उचित वातावरण मिलने व रोगी पशुओं के सम्पर्क में आने पर स्वस्थ पशु भी बीमारी से संक्रमित हो जाते हैं। यदि कोई पशु अधिक ज्वर से मर जाये और मरने के बाद उसके शरीर के प्राकृतिक गुहाओं से रक्तस्राव होता रहे तो पशु को प्लीहा रोग होने की सम्भावना रहती है। कभी–कभी ऐसा भी देखा जाता है कि जानवर की कुछ ही

घण्टों में मृत्यु हो जाती है परन्तु किसी–किसी जानवर में यह बीमारी कई दिनों तक रहती है। इस प्रकार के रोग ग्रसित जीवित पशुओं की चिकित्सा अवधि में विशेष सावधानी बरतनी पड़ती है क्योंकि ऐसे संक्रमित पशुओं से स्वस्थ पशुओं एवं मनुष्यों में भी रोग फैलने की सम्भावना बनी रहती है।

भेड़ एवं बकरियों में अनेक प्रकार के रोग होते हैं जिसके कारण पशुपालक को आर्थिक हानि होती है। कई बार अन्य रोगग्रस्त पशुओं से भी समुदाय में रोग फैल जाता है। साफ–सफाई का विशेष ध्यान रखें तथा भेड़–बकरियों के पोषण में कमी न होने दें। एक ही स्थान पर अधिक संख्या में भेड़–बकरियों को चरने से न केवल घास समाप्त होती है बल्कि उनके मल–मूत्र से चारागाह भी दूषित हो जाता है जिसके कारण परजीवियों का संक्रमण बढ़ जाता है जो दस्त व अन्य रोगों को जन्म देते हैं। चरने वाली भेड़–बकरियों में रोग के लक्षण जानने के लिए हर सुबह बाड़े का निरीक्षण एक बार अवश्य करना चाहिए।

प्लेग/पी.पी.आर. (पेस्टी डेस पेटिट्स ऑफ रूमीनेंट) : यह रोग सभी उम्र की भेड़ एवं बकरियों में पाया जाता है परन्तु बच्चों में इसका प्रकोप अति तीव्र होता है। इस रोग से 50–70 प्रतिशत बकरियाँ एवं भेड़ें मर जाती हैं। यह रोग बहुत ही संक्रामक है तथा बहुत ही जल्द महामारी के रूप में फैल जाता है। इस बीमारी में पशुओं की साँस तेज चलती है व साँस लेने में परेशानी होती है। इस रोग के 2–4 दिनों बाद ग्रसित पशुओं में तीव्र दस्त शुरू हो जाता है जो कि एक धार की तरह होता है। इस अवस्था में पशु खाना–पीना छोड़ देता है। पशु का तापक्रम बहुत अधिक हो जाता है तथा मृत्यु भी हो जाती है। बचाव के लिए मानसून से पूर्व भेड़ एवं बकरियों को इस बीमारी का टीका अवश्य लगवाना चाहिए। पहला टीका 2 माह तथा दूसरा टीका 4 साल की उम्र में लगाते हैं।

टीकाकरण

इन्टेरोटॉक्सीमिया (ई.टी.) : यह बीमारी विशेष रूप से भेड़ एवं बकरियों में होती है। इस बीमारी का लक्षण है पतला दस्त, जिससे पशु की मृत्यु हो जाती है।

मात्र टीकाकरण के द्वारा ही इस बीमारी से बचाव किया जा सकता है। टीका वर्ष में एक बार मानसून से पूर्व लगाया जाता है। यह बीमारी एक बीमार पशु से स्वस्थ पशु में किसी भी माध्यम से फैलती हैं। अतः पशुपालक, संक्रमित पशुओं या बीमार पशुओं को अलग करके रखें तथा उचित उपचार कर समयानुसार टीका लगवायें एवं स्वस्थ पशुओं को भी टीका लगायें।